National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(60): 213-215
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

ज्योति देवी
शोध छात्रा, संस्कृत विभाग,
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त-विश्वविद्यालय

Correspondence:
ज्योति देवी
शोध छात्रा, संस्कृत विभाग,
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त-विश्वविद्यालय

डॉ. निरञ्जन मिश्र कृत 'ग्रन्थिबन्धनम्' महाकाव्य में नीतितत्त्व

ज्योति देवी

सारांश:

संस्कृत महाकाव्य-विधा भारतीय साहित्य में केवल काव्य-रस की साधना नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन, सांस्कृतिक मूल्यों और नीतिपरक आदर्शों के प्रसार का भी सशक्त माध्यम रही है। आधुनिक संस्कृत महाकाव्यकारों ने इस परम्परा को युगानुरूप विस्तार देते हुए सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन तथा नैतिक मूल्यों के संरक्षण का कार्य किया है। डॉ. निरञ्जन मिश्र कृत *ग्रन्थिबन्धनम्* महाकाव्य इसी परम्परा का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें दहेज-प्रथा जैसे ज्वलन्त विषय को आधार बनाकर विविध नीतिसूत्रों का काव्यमय प्रतिपादन हुआ है। प्रस्तुत शोध-पत्र में *ग्रन्थिबन्धनम्* में निहित प्रमुख नीतितत्त्वों का विवेचन किया गया है।

भूमिका

संस्कृत साहित्य में महाकाव्य-विधा का उद्भव केवल काव्य-सौन्दर्य के लिए नहीं, बल्कि समाज-जीवन के आदर्शों और मूल्य-व्यवस्था के प्रतिपादन हेतु हुआ। आचार्यों ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष — इन चार पुरुषार्थों के संतुलित साधन को जीवन का परम लक्ष्य माना। आधुनिक संस्कृत महाकाव्यकार इस परम्परा से प्रेरणा लेते हुए अपने युग के सामाजिक प्रश्नों को कथानक का केन्द्र बनाते हैं। इसी कड़ी में डॉ. निरञ्जन मिश्र का *ग्रन्थिबन्धनम्* महाकाव्य साहित्यिक सौष्ठव और नीति-दर्शन का अनूठा संगम प्रस्तुत करता है।

ग्रन्थिबन्धनम् महाकाव्य सोलह सर्गों में रचित एक आधुनिक संस्कृत महाकाव्य है, जिसका कथानक 'दहेज-प्रथा' के दुष्परिणामों पर केन्द्रित है। कवि ने इस कुरीति से उत्पन्न पारिवारिक विघटन, सामाजिक असंतुलन और मानवीय सम्बन्धों के पतन को मार्मिक शैली में चित्रित किया है। महाकाव्य के शीर्षक में प्रयुक्त "ग्रन्थि" और "बन्धन" शब्द प्रतीकात्मक रूप से जीवन की जटिलताओं एवं कुरीतियों के बन्धनों का बोध कराते हैं।

महाकाव्य का प्रमुख संदेश है कि अन्यायपूर्ण साधनों से प्राप्त सुख क्षणभंगुर होता है —

"अधर्मसम्भवो लाभो नितरां क्षणभङ्गुरः।"

दहेज जैसी कुरीतियों से अर्जित धन तात्कालिक लाभ दे सकता है, परंतु वह पारिवारिक सौहार्द एवं सामाजिक प्रतिष्ठा को नष्ट कर देता है। महाभारत शान्तिपर्व[1] में भी कहा गया है कि अधर्म से प्राप्त फल अंततः विनाशकारी होते हैं।

नायिका 'सुकन्या' के चरित्र के माध्यम से कवि ने प्रतिपादित किया है कि स्त्री को वस्तु की भाँति क्रय-विक्रय का साधन बनाना समाज के नैतिक पतन का लक्षण है। भगवद्गीता के अनुसार **आत्मवत् सर्वभूतेषु**[2] समानभाव ही श्रेष्ठ नीति है।

बध्नाति का केन कदा विधाता स एव जानाति न कश्चिदन्यः ।
बुद्धेर्विलासो न हि यत्र तत्र ग्राह्या न सिद्धान्तसुखं सुधीभिः ॥"[3]

इस श्लोक में कवि यह स्पष्ट करते हैं कि नारी के जीवन में क्या बंधन, कब और किस प्रकार आएँगे—

इसका ज्ञान केवल विधाता (ईश्वर) को है, अन्य किसी को नहीं। यह भाग्यवाद नारी की स्थिति को दारुण बनाता है, क्योंकि उसकी इच्छाएँ और संकल्प समाज के ठोस नियमों और परिस्थितियों से टकरा जाते हैं।

यहाँ स्त्री-जीवन का अनिश्चित भविष्य और सामाजिक-धार्मिक बंधनों की कठोरता उभरती है। कवि यह भी कहते हैं कि बुद्धिमान व्यक्ति बिना विवेक के किसी भी स्थान पर अपने सिद्धांतों को लागू नहीं करता; नारी के विषय में भी परिस्थितिजन्य संवेदनशीलता अपेक्षित है। नारी-स्वभाव, निराशा और आत्मगौरव को प्रस्तुत करते हुए कवि कहते हैं कि

"नैराश्यमेतन्नहि रोचते ते स्त्रीत्वं सदा कातरतां प्रयाति ।

न वाभिमानग्रहणेन भाव्यं न स्वाभिमानाद्रहितेन चापि ॥"[4]

इस श्लोक में स्त्री-स्वभाव के दो पहलुओं को दर्शाया गया है— 1. नैराश्य (हताशा) नारी को शोभा नहीं देता, क्योंकि यह उसे स्थायी कातरता (असहायता) की ओर ले जाता है। 2. नारी को न तो अहंकारपूर्ण अभिमान में रहना चाहिए, न ही पूर्ण रूप से आत्मगौरवहीन बनना चाहिए। यहाँ कवि का दृष्टिकोण संतुलित है— नारी की शक्ति और आत्मसम्मान की रक्षा आवश्यक है। साथ ही, अत्यधिक अभिमान भी उसके व्यक्तित्व को हानि पहुँचा सकता है। ग्रन्थिबन्धनम् में स्त्री विमर्श की मुख्य विशेषताएँ है-

भाग्यवाद और सामाजिक बंधन

कवि यह दिखाते हैं कि नारी का जीवन अक्सर बाहरी शक्तियों द्वारा संचालित होता है, जिन पर उसका स्वयं का नियंत्रण नहीं होता।

मानसिक स्थिति का चित्रण

हताशा, भय, और आत्मसम्मान के द्वंद्व को बड़ी संवेदनशीलता से उकेरा गया है।

संतुलित दृष्टि

कवि न तो नारी को केवल करुणा की पात्र के रूप में दिखाते हैं, न ही उसे अवास्तविक आदर्श के रूप में; बल्कि वास्तविक जीवन के संघर्षों में उसकी मानसिकता और व्यवहार को रेखांकित करते हैं। नारी-स्वातंत्र्य और मर्यादा, आत्मगौरव आवश्यक है, पर वह संयमित और मर्यादाबद्ध हो।

आत्मरक्षा और स्वधर्मपालन

कवि का मत है — **"आत्मरक्षाविधानेन को नामी धरणीतले।"**[5] अर्थात् आत्मरक्षा की विधि जानने वाला ही ख्याति प्राप्त करता है।

महाभारत का "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्"[6] तथा गीता का **"स्वधर्मे निधनं श्रेयः"**[7] भी इसी भाव को पुष्ट करते हैं।

अभ्यास, वैराग्य और सत्पथ

"अभ्यस्तस्यार्थः कीटेन वयोऽस्सम्।"[8]

बिना अभ्यास के प्राप्त वस्तु क्षणभंगुर होती है। गीता[9] और पञ्चतन्त्र — दोनों ही अभ्यास एवं वैराग्य को सफलता का आधार मानते हैं।

दुर्जन-संगति से बचाव"

विपर्ययेवास विपर्ययेण।"[10]

अर्थात् विपरीत उपाय से विपरीत ही फल मिलता है। नीतिशतक के अनुसार दुर्जन की संगति अंततः हानिकारक होती है, चाहे वह प्रारम्भ में मधुर क्यों न लगे।[11]

विद्या और संस्कार

"विद्यायाः यस्य गुणगणाः।"[12]

विद्या को गुणों की जननी कहा गया है। हितोपदेश में विद्या को मानव का वास्तविक रूप एवं स्थायी सम्पत्ति बताया गया है। समय का मूल्य **"कालस्मरणान्नीतिरिति।"**[13] समय का स्मरण एवं पालन ही नीति है; समय-उपेक्षा विनाश का कारण है। सहिष्णुता और विनय महाभारत में **'क्षमा धर्मः'** कहा गया है, और गीता[14] में क्षान्ति को दैवी सम्पदा का अंग माना गया है। कवि के अनुसार सहिष्णुता व्यक्ति को सम्माननीय बनाती है।

सामाजिक व्यवहार और विवेक

"लोकलाभः कृत्याय कुशीलता।"[15]

लोकहित ही वास्तविक कुशलता है। विवेक-निरपेक्ष तर्क-वितर्क सत्य को दबा सकता है, अतः तर्क में संतुलन आवश्यक है।

भाषा-शैली और काव्य-वैभव

महाकाव्य की भाषा संस्कृत की परिष्कृत परम्परा के अनुरूप है। छन्द-विन्यास सटीक और भावानुकूल है। शृंगार, करुण, वीर और शान्त इन रसों का स्वाभाविक संगम हुआ है। उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक आदि अलंकारों ने काव्य में सौन्दर्यवृद्धि की है।

उपसंहार

ग्रन्थिबन्धनम् महाकाव्य केवल साहित्यिक आनन्द का साधन नहीं, बल्कि समाज-सुधार एवं नैतिक शिक्षाओं का सशक्त माध्यम है। इसमें आत्मरक्षा, स्वधर्मपालन, अभ्यास, वैराग्य, सत्पथ, सज्जन-संगति, विद्या, संस्कार, समयपालन, सहिष्णुता, लोकहित और विवेक — ये सभी नीतिसूत्र जीवन, समाज और राष्ट्र के स्थायी उत्थान के आधारस्तम्भ के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं।

अतः यह महाकाव्य आधुनिक संस्कृत साहित्य में परम्परा और आधुनिकता का सेतु बनकर, न केवल काव्य-रस, बल्कि जीवन-मार्गदर्शन का अमूल्य स्रोत सिद्ध होता है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

1. मिश्र, डॉ. निरञ्जन — ग्रन्थिबन्धनम् महाकाव्यम्। वाराणसी: चौखम्भा विद्याभवन, 2015।
2. व्यास, महर्षि — महाभारतम् (सम्पा. विश्वनाथ शास्त्री)। गोरखपुर: गीताप्रेस, 2014।
3. व्यास, महर्षि — श्रीमद्भगवद्गीता (भाष्य सहित, सम्पा. जयदयाल गोयन्दका)। गोरखपुर: गीताप्रेस, 2016।
4. भारवि — किरातार्जुनीयम् महाकाव्यम् (सम्पा. पं. बालदेव उपाध्याय)। वाराणसी: चौखम्भा संस्कृत सीरीज, 2002।
5. कालिदास — रघुवंशम् महाकाव्यम् (सम्पा. पं. हरिदत्त शास्त्री)। दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, 2008।
6. पण्डित विष्णु शर्मा — पञ्चतन्त्रम् (सम्पा. पं. काशीनाथ पाण्डुरंग)। वाराणसी: चौखम्भा संस्कृत सीरीज, 2001।
7. हितोपदेश — सम्पा. हरिदास सिद्धान्तवागीश। कोलकाता: नवभारत प्रेस, 1998।
8. भर्तृहरि — नीतिशतकम् (सम्पा. विश्वनाथ जोशी)। जयपुर: राजस्थान संस्कृत अकादमी, 2010।
9. पतञ्जलि — महाभाष्यम् (सम्पा. डॉ. के. वी. अभ्यंकर)। पुणे: deccan college, 1962।
10. गोयन्दका, जयदयाल — गीतारहस्य एवं भावार्थ। गोरखपुर: गीताप्रेस, 2011।

सन्दर्भ: -

[1] महाभारत शान्तिपर्व 112/15

[2] भगवद्गीता (6.32)

[3] ग्रंथिबंधनम् 3/62

[4] ग्रंथिबंधनम् 3/71

[5] 1/9

[6] (शान्तिपर्व 109/11)

[7] भगवद्गीता (3.35)

[8] (१/३०)

[9] (6.35)

[10] (३/२४)

[11] नीतिशतक 78

[12] 5/2

[13] 5/3

[14] गीता (13.7)

[15] 9/6